ISSN: 2393-8900 IMPACT FACTOR : 2.7825(UIF) VOLUME - 7 | ISSUE - 5 | JAN - 2021

HISTORICITY RESEARCH JOURNAL

साहित्य, समाज और हिंदी सिनेमा का मंथन

प्रा.डॉ. दिलीप कोंडीबा कसबे
हिंदी विभाग,
विज्ञान महाविद्यालय,सांगोला.

- **प्रस्तावना -**

साहित्य, समाज और हिंदी सिनेमा का मंथन सर्वत्र व्याप्त है। इसके द्वारा हम अपने विभिन्न सांस्कृतिक मूल्यों का भी प्रचार एवं प्रसार कर सकते है। मानवीय स्वस्थ समाज के लिए जिन बातों की महत्ता है वे सभी सिनेमा के माध्यम से दर्शाये जा सकते है। जैसे सामाजिक कुप्रथाओं, रूढियों, इतिहास, भूगोल, विज्ञान, टेक्नोलॉजी आदि को उन्मूलित करने में भी सिनेमा का योगदान सराहनीय है ।

साहित्य मानव चेतना की अभिव्यक्ति है। इसलिए साहित्य और समाज के पारस्परिक संबंध एक-दूसरे पर निर्भर होते है। तात्पर्य यह है कि साहित्य, समाज और हिंदी सिनेमा का संबंध परस्पर पूरक एक-दुसरे पर निर्भर है।

- **'साहित्य' शब्द की व्युत्पत्ति और अर्थ : -**

वैसे देखे तो 'साहित्य' शब्द संस्कृत से आया माना है। इसकी व्युत्पत्ति पर संस्कृत आचार्य, भारतीय विद्वजल आदियों ने गहनता से विचार किया है। जैसे हिंदी साहित्य कोश के अनुसार "साहित्य शब्द की व्युत्पत्ति साहित+ यत प्रत्यय से हुई है।"[१] अर्थात जो साथ रखने योग्य हो, वह साहित्य कहलाता है। साथ ही 'ज्ञान शब्द कोश' में साहित्य शब्द का अर्थ - साथ, संयोग, भेद आदि।"[२] संक्षिप्त में साहित्य की नीव ही व्यापक धरातल पर टिकी हुई है।

- **'समाज' शब्द की व्युत्पत्ति और अर्थ : -**

'समाज' शब्द संस्कृत से आया माना है। समाज शब्द की व्युत्पत्ति "सम+ अप्त+ धत्रे से हुई है। हिंदी विश्वकोश में समाज का अर्थ इस तरह दिया है। समूह, संघ, दल।"[३] आदि है।

डॉ. नरेंद्र के अनुसार - "कृति और पाठक के त्रिकोण रूप साहित्य के सामाजिक परिवेश का विश्लेषण और संश्लेषण ही साहित्य का समाज शास्त्रीय अध्ययन है |"[४]

- **सिनेमा का प्रभाव : -**

आज के समय में सिनेमा का प्रभाव सर्व व्याप्त है। कारण की समाज में विभिन्न घटित घटनाओं पर सिनेमाद्वारा भली प्रकार प्रकाश पडता है। उदाहरण के लिए दहेज प्रथा से होनेवाली मौतों आदि से संबंधित घटनाओं का विभिन्न वर्णन सिनेमा के माध्यम से विदित होता है तथा समाज में व्याप्त अनेक प्रकार की बुराईयो पर गंभीरता से विचार किया जाता है।

- **सिनेमा और साहित्य का संबंध : -**

सिनेमा से साहित्य का संबंध हृदयंगम है जितना स्वयं सिनेमा पुराना है। रंगमंच की आवश्यकता हो अथवा सिनेमा की, साहित्य उसकी पूर्ति अनेक तरीकों से करता रहा है।

- सिनेमा में गीतों का अपना महत्व है। गीतों आदि माध्यम से भी साहित्य सिनेमा की एक बडी जरूरत को पूरा करता है। जैसे न जाने कितने साहित्यिक गीत, गजले, दोहे फिल्मों में स्थान पा चुके है। संक्षिप्त में सिनेमा के सहयोग से साहित्य भी अत्यंत प्रभावित तथा अधिक लोकप्रिय हो चुके है। अर्थात भीष्म सहानी का उपन्यास 'तमस' फिल्मीकरण के बाद अनेक संस्करणों में बिका। भगवतीचरण वर्मा के के उपन्यास 'चित्रलेखा' को भी फिल्म बनने के बाद बडी लोकप्रियता मिली। निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि सिनेमा और साहित्य का अटूट संबंध है।

• सिनेमा में आए हुए हिंदी साहित्यकार : -

प्रेमचंद के बाद मशहूर हिंदी लेखक पं. बेचन शर्मा 'उग्र' भी सिनेमा जगत में आए और उन्होंने १९३५ में 'आजादी','रतनमंजरी' जैसे सिनेमा को लिखा लेकिन वे लौट आ गए १९३८ में 'चित्रलेखा' के लेखक भगवती चरण वर्मा फिल्मों में आए। १९४१ में केदार शर्मा की फिल्म 'चित्रलेखा'की पटकथा लिखी थी। बाद में बॉम्बे टाकिज में उन्होंने 'किस्मत' नामक फिल्म में संवाद लिखे। हिंदी साहित्यकार अमृतलाल नागर भी फिल्मों से संबंध रख चुके है। हिंदी के कथाकार कमलेश्वरने अनेक फिल्मो की कथाएँ, पटकथाएँ लिखी। प्रसिध्द गीतकार, साहित्यकार श्री हरिवंशराय बच्चन ने आलाप, मिली, सिलसिला फिर भी जैसे अनेक फिल्मों में गीत लिखे। संक्षिप्त में राही मासूम रजा, निर्देशक प्रेम कपूर, निर्देशक शिवेंद्र सिन्हा आदि फिल्मों में प्रतिष्ठित लेखक रहे। संक्षिप्त में सिनेमा में आए हुए हिंदी साहित्यकारों ने अन्य असंख्य हिंदी लेखक है।

• हिंदी साहित्य, समाज का हिंदी सिनेमा में योगदान : -

साहित्य और समाज का संबंध अन्योन्याश्रित है। याने साहित्य की निर्मिती समाज के बिना नही और बिना साहित्य के समाज भी अपना कोई महत्व नही रखता। हमारी लोकसंस्कृति में लोक परंपराए, लोकानुरंजनकारी कार्यक्रम, नुक्कड, नाटक, राम कथा, रामलिला, महाभारत कथा, भजन, किर्तन आदि के माध्यम से सामुहिक रुप से 'समूह संचार'अत्यंत सफलतापूर्वक योगदान है। इस आधुनिक काल में सिनेमा, फोरम, सामूहिक वाद-विवाद,नाटयशालाओं में सामूहिक अवलोकन समूह संचार रूप है।

साहित्य, समाज और सिनेमा के योगदान में संकेत, बोली, चित्र, पत्र, चित्रांकन, चित्रभाषा, लिपि, पुस्तक, सूचना पत्र, समाचार पत्रों से सिनेमा, रेडिओ, टेलीविजन, कम्प्यूटर्स, सैटेलाईट आदि का समावेश है जो प्रतिनिधित्व करते आये है। जैसे - "परंपरागत माध्यमों के स्थान पर आपसी संचार के लिए सर्व प्रथम इग्लैंड में सन १६८० में एक सुव्यवस्थित डाक प्रणाली प्रारंभ की गई जिससे विभिन्न देशों, प्रदेशों में रहनेवाले व्यक्तियों का आपस में संपर्क सुलभ हो गया।"[५] संक्षिप्त में कहना है तो हिंदी सिनेमा के प्रचार-प्रसार में समुह माध्यमों का योगदान बडा सराहनीय है। क्योंकि १९ वी सदी में भारत में सिनेमा युग का आरंभ हुआ था। सन १९१३ में दादासाहब फालके ने 'हरिश्चंद्र' फिल्म बनाकर भारत को विशेष रूप से सिनेमा के सामने खडा कर दिया।

वास्तवत: साहित्यकार और दिग्दर्शक दोनों को भी सामाजिक हितों को सामने रखकर ही अपनी सृजनों का निर्माण करना चाहिए। संक्षिप्त में कहना है तो दिग्दर्शक अपने समय के देशकाल, वातावरण आदि से प्रभावित हुए बिना नहीं रहते हुए होंगे। जैसे डॉ. अर्चना जी ने लिखा है -"सिनेमा में मानवीय जीवन की विविध घटनाएँ दृश्यमान होती है, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति अपनी-अपनी दृष्टि से अपने- अपने जीवन का प्रतिबिंब देखता है। विशेषता सिनेमा के माध्यम से समाज के विभिन्न वर्गों, समुदायों के रूप अलग-अलग दृश्य बंधों में हमारे संम्मुख प्रकट होते है। फिल्म का निर्देशक अपनी सृजनात्मक और सौंदर्यविधायिनी कल्पना की सहायता से समाज के उस परिवेश को बडी गहराई से दृश्य रुप में साकार करने में समर्थ होता है, जहाँ एक संवेदनशील साहित्यकार भी नहीं पहुँच पाता।"[६] संक्षिप्त में मेरी राय है की सिनेमा में समाज जीवन के विभिन्न पहलुओं को बारिकी से चित्रित करना अनिवार्य है। क्योंकि प्रेमचंद की दूसरी फिल्म थी अजंता - सिनेटोन, मुंबई द्वारा १९३४ में ही निर्मित 'नवजीवन' इस फिल्म में आदर्शवादी प्रेम दिखाया था। मात्र इसमें प्रेमचंद की मूल कहानी नाम मात्र को ही रह गई थी, ऐसा न हो। तदंतर प्रेमचंद के ही साहित्य पर तीसरी फिल्म उनके सुप्रसिध्द उपन्यास 'सेवासदन' पर बनी थी। तब उन्होंने अपनी मनीच्छा प्रकट की थी कि -"यदि मेरे इस उपन्यास द्वारा समाज का कुछ भी उपकार हो सका तो मै अपने आपको कृतार्थ मानुंगा।"[७] स्पष्ट है कि ऐसे अनेक लेखक है कि जिनके पुस्तकों का फिल्मांतरण किया गया है, उनमें सेठ गोविंददास, पं. सुदर्शन, भगवती चरण वर्मा आदि प्रमुख माने जाते है।

'तीसरी कसम' का निर्माण हिंदी कथा साहित्य के फिल्मांतरण के इतिहास में एक ऐतिहासिक घटना है। इसको सन १९६६ की सर्वोत्कृष्ठ फिल्म के लिए राष्ट्रपति का स्वर्ण पदक दिया गया था। इस फिल्म को इमेज मेकर्स, मुंबई के बैनर तलै बनाया गया था और इसके निर्देशक थे बासु भट्टाचार्य। 'तीसरी कसम' पर लिखी अपनी मर्मभेदी समीक्षा में डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी ने लिखा है -"जहाँ तक प्रेम का संबंध है, दोनों का जीवन रेगिस्तान है। जीवन में प्रेम का कैसा स्त्रोत दबा पडा है और थोडा - सा अवसर पाते ही वह कितने वेग से एक दूसरे की ओर दौड पडता है - यही इस कहानी की मार्मिक भूमि है।"[८]

साहित्य या पुस्तक का आनंद एक समय में एक ही व्यक्ति प्राप्त कर सकता है। लेकिन सिनेमा का आनंद एक साथ सभी लोग ले सकते है। सिनेमा आम जनता तक पहुँचा हुआ एक प्रभावी माध्यम है। "विश्व के जनमानस पर असर करनेवाला सर्वाधिक प्रभावी माध्यम

फिल्म है। फिल्म का प्रभाव सभी उम्र, वर्ग, तथा वर्ण के लोगों पर पडता है। फिल्म का अनुकरण बच्चों के साथ-साथ बडे भी करते है।"[९] अर्थात सभी वर्ग के लोग फिल्में देखते है।

समाज के प्रति अपनी प्रतिबद्धता को बनाए रखनेवाले फिल्म निर्देशकों में सत्यजीत रे, गोविंद निहलानी, श्याम बेनेगल, गुलजार आदि के नाम बडे आदर से लिए जा सकते है। डॉ. कैलासबहन उपाध्याय के अनुसार "सत्यजीत रे, गोविंद निहलानी, श्याम बेनेगल, गुलजार इत्यादि ने अपनी प्रतिबध्दता के साथ कभी समझौता नही किया। संजयलीला भन्साली और मधुर भंडारकर तथा विशाल भारद्वाज आज के कार्पोरेट क्षेत्र के दिग्दर्शक है, जो समालक्षी फिल्म बनाकर अपने आदर्श और अपना आईडिया प्रस्तुत करते है।"[१०] इस तरह कई दिग्गज निर्देशकों ने समाज के ज्वलंत प्रश्नों पर आधारित अपने फिल्मों का निर्माण किया। जिनमें राजकपूर, गुरूदत्त, महेश भट्ट, प्रकाश झा, मृणाल सेन आदि के नाम लिए जा सकते है।

आजकल के राजनीति, अपहरण, बलात्कार, हत्या आदि विषय को लेकर यह फिल्म वर्तमान युग के अनेक प्रश्नों को हमारे सामने उपस्थित करती है। जैसे - "हमारे समाज के वास्तविक प्रश्नों को लेकर चाहे वह राजनीति की गंदगी हो, अपहरण की घटना हो या अंधा कानून हो, अथवा कार्पोरेट क्षेत्र की स्पर्धा हो या राजनीति में गुंडागर्दी अथवा आपसी राजनैतिक पक्षों की पक्ष बदलने की रीति-नीति हो या बंबई अंडरवर्ल्ड या गैंगस्टर की दुनिया का पर्दाफाश करना हो, अंतिम एक दशक में सैंकडो फिल्में आई जिनके द्वारा समाज में व्याप्त विकृतियों, विसंगतियों पर प्रश्न उठाये गए।"[११] इस तरह समाज में व्याप्त सामाजिक एवं राजनीतिक विसंगतियों को उजागर करने में हिंदी फिल्मों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। आजकल फिल्मों में अकाल्पनिक, अतिशयोक्ति पूर्ण घटित घटनाओं का तथा सेक्स आदि का अधिक प्रदर्शन दिखाई दिया जा रहा है। जिसके दुष्परिणाम भी आज समाज को भुगतने पड रहे है। जैसे -"फिल्म का परिणाम समाज पर होता है, यह ध्यान रखने की आवश्यकता सभी को महसूस हो रही है। फिल्में कितनी ही व्यावसायिक हो, किंतु संस्कृति विरोधी न हो।आज फिल्म के नायक, नायिका, खलनायक और गौण पात्रों का असर अधिकांश मात्रा में युवा पीढी हो रहा है।"[१२] अत: हम चाहते है कि समाज हित को सामने रखकर ही फिल्मों का निर्माण किया जाए | सिर्फ अर्थ प्राप्ति को महत्व न दे। क्योंकि आज कल फिल्म जगत की व्यावसायिकता अधिक दृष्टव्य लग रही है | अर्थात संक्षिप्त में कहे तो सन १९३५ के सेठ गोविंददास की 'धुवांधार' फिल्म में शूरवीर गोंड युवक अपनी वीरता के आधार पर एक क्षत्रिय राजकन्या से विवाह करने पर उसे क्षेत्रिय एवं गोंड जातियों के ताने-बाने से यह कथा बुनी गई थी। इस फिल्म में अभिनेता नाना पलसीकर ने इस फिल्म के बारे में ऐसा लिखा है, जो वास्तव लगता है। जैसे - "फिल्म उदयोग के इतिहास में हिंदी फिल्म बनाने के लिए जितने भी आयोजन किए गए थे, उनमें यह सबसे जादा सही और दुरुस्त था। मेरे खयाल से हिंदी फिल्म के लिए फिर कभी कोई हिंदी फिल्म निर्माण दल सामने नहीं आया। फिर तो पिक्चरे ही बनती रही जो अब भी बन रही है।"[१३] इससे स्पष्ट है आज फिल्म में व्यावसायिकता, राजनीति, भरमार दृश्य, असांस्कृतिकता चित्रित हो रही है।

वास्तवत: आज समाज में साहित्यिक ऊहापोहों का सबसे अधिक फिल्मांतरण नवसिनेमा आंदोलन के अंतर्गत होने लगा है। नव सिनेमा आंदोलन के प्रारंभ होने में फिल्म 'वित्त आयोग' की विशेष भूमिका रही है। जैसा कि अरूण वासुदेव ने लिखा है -"यह एक विडंबना है कि आंदोलन फिल्मकारों के मौजूदा लोकप्रिय सिनेमा का विरोध करने के कारण शुरू नही हुआ बल्कि इसका जन्म तो एक सरकारी निर्णय के कारण हुआ।"[१४] संक्षिप्त में हम कह सकते है कि आज के सिनेमा आंदोलन के अंतर्गत अधिकतर फिल्मकारों ने ऐसी फिल्म बनाई जिन्हे दर्शक और फिल्म पारखियों को फिल्म पसंद आये या न आये। अर्थात गुणवत्ता और परिणाम की दृष्टि से हिंदी साहित्य का सर्वाधिक फिल्मांतरण हुआ है। इसलिए इस युग को फिल्मांतरण का स्वर्ण युग कहे तो कोई गैर नहीं।

• सारांश : -

साहित्य, समाज और हिंदी सिनेमा का संबंध एक-दूसरे पर निर्भर है। सिनेमा में समाज में व्याप्त अनेक प्रकार की बुराईयों पर गंभीरता से विचार किया जाता है। जैसे दहेज प्रथा, आंदोलन, किसान, आत्महत्याएँ, देश प्रेम आदि असंख्य घटित घटनाओं पर तथा विभिन्न साहित्य में चित्रित मर्मस्पर्शी समस्याओं पर सिनेमा बनते है। अर्थात आज तक अनेक साहित्यिक गीत, गजलें, दोहें, फिल्मों में स्थान पा चुके है।

सिनेमा के मंथन में आए हुए हिंदी साहित्यकारों ने प्रेमचंद, पं. बेचन शर्मा 'उग्र', भगवतीचरण वर्मा, केदार शर्मा, अमृतलाल नागर, कमलेश्वर, हरिवंशराय बच्चन, राही मासूम रजा, प्रेम कपूर, शिवेंद्र सिन्हा आदि असंख्य फिल्मों में प्रतिष्ठित लेखक रहे है।

साहित्य, समाज और सिनेमा के योगदान में संकेत, बोली, चित्र, पत्र, चित्रांकन, चित्रभाषा, लिपि, पुस्तक, सूचना पत्र, समाचार पत्रों से सिनेमा, रेडिओ, टेलीविजन, कम्प्युटर्स, सैटेलाईट आदि का समावेश है।

१९ वी सदी में भारत में सिनेमा युग का आरंभ हुआ। सन १९१३ में दादासाहब फालके ने 'हरिश्चंद्र' फिल्म बनाकर भारत को विशेष रूप से सिनेमा के सामने खडा कर दिया। प्रेमचंद की दूसरी फिल्म थी अजंता - सिनेटोन, मुंबईद्वारा १९३४ में ही निर्मित 'नवजीवन', तीसरी फिल्म उनके सुप्रसिध्द उपन्यास 'सेवासदन' पर बनी थी। सेठ गोविंददास की 'धुवांधार' फिल्म, पं. बेचन शर्मा 'उग्र' जी ने १९३५ में 'आजादी', 'रतनमंजरी' जैसी फिल्मे लिखी। केदार शर्मा की फिल्म 'चित्रलेखा', 'किस्मत' आदि।

समाज के प्रति अपनी प्रतिबध्दता को बनाए रखनेवाले फिल्म निर्देशकों में सत्यजीत रे, गोविंद निहलानी, श्याम बेनेगल, गुलजार, राजकपूर, गुरूदत्त, महेशभट्ट, प्रकाश झा, मृणाल सेन आदि के नाम बडे आदर से लिए जा सकते है।

सिनेमा आनंद देनेवाला माध्यम तो है किंतु उसके साथ समाज में घटित घटनाओं का ऊहापोह कर सही और गलत कर्म का निर्देश का काम भी करता है।

अंत मैं कहूँगा कि पुराने फिल्मों की तुलना में आज कल की फिल्म जगत व्यावसायिक अधिक द्रष्टव्य है। आज के सिनेमा होड (आंदोलन) के अंतर्गत अधिकतर फिल्मकारों ने कई ऐसी फिल्म बनाई जिन्हें दर्शक और फिल्म पारखियों को फिल्म पसंद आये या न आये। यहाँ स्पष्ट है, गुणवत्ता और परिणाम की दृष्टि से हिंदी साहित्य का सर्वाधिक फिल्मांतरण हुआ है। इसलिए इस युग को 'व्यावसायिक फिल्मांतरण' का स्वर्ण युग कहें तो कोई गैर नहीं है।

• संदर्भ - सूची : -

१) हिंदी साहित्य कोश (भाग - १) - सं. धीरेंद्र वर्मा, द्वितीय संस्करण संवत २०२०, पृ - ९२०
२) ज्ञान शब्द कोश (भाग - १) - सं. मुकुंदिकाए श्रीवास्तव, सं. २०१३, पृ - ८४२
३) हिंदी साहित्यकोश (भाग - १) सं. धीरेंद्र वर्मा, द्वितीय संस्करण - २०२०, पृ - ९२०
४) साहित्य का समाजशास्त्र -डॉ. नगेंद्र, पृ - ५४
५) संचार माध्यमों में हिंदी का प्रयोग - डॉ. लक्ष्मीकांत पांडे, पृ - १०
६) प्रयोजनमूलक हिंदी - सं. बलजिंदर कौर रंधावा और कौशल पांडेय, पृ - १०८
७) ८ मई १९३४ को प्रेमचंदद्वारा जैनेंद्र कुमार को लिखा पत्र, माधुरी ९ अक्टूबर १९६४
८) रेणु की कहानी - तीसरी कसम - समीक्षा दशक, पृ - २५९
९) जनसंचार एवं पत्रकारिता : कल और आज - डॉ. सिद्राम खोत, पृ - ९४
१०) साहित्य और समाज - सं.प्रा. मुकेश कुमार कांजिया, पृ - ३५
११) साहित्य और समाज - सं.प्रा. मुकेश कुमार कांजिया, पृ - ३६
१२) जनसंचार एवं पत्रकारिता : कल और आज - डॉ. सिद्राम खोत, पृ - ९७
१३) माधुरी - ८ सितंबर, १९६७, पृ - ११
१४) दी सिनेमास ऑफ इंडिया, पृ - १४६